नईदुनिया

संपादकीय

बारह सौ कॉल और चौसठ हाथ साइबर ठगी के सामने बौना सिस्टम

ठग तेज है, सिस्टम सुस्त है। हर दिन बारह सौ फोन। हर फोन के पीछे किसी की पूरी जिंदगी की कमाई लुटने की कहानी है। कोई रिटायर्ड मास्टर है, जिसका पेंशन वाला खाता खाली हो गया। कोई छात्र है, जिसके लोन के नाम पर दस्तावेज चुरा लिए गए। कोई महिला है, जिसे डिजिटल अरेस्ट का डर दिखाकर घंटों कैमरे पर बैठाए रखा गया। यह आंकड़ा अब खबर नहीं रहा, यह रोज की हकीकत बन गया है। साइबर अपराध अब चोरी नहीं, बल्कि संगठित उद्योग बन चुका है और इस उद्योग के सामने हमारा सुरक्षा तंत्र आज भी लाठी और रजिस्टर वाले दौर में खड़ा नजर आ रहा है। सरकार ने पोर्टल बनाए हैं, हेल्पलाइन बनाई है, जागरूकता के विज्ञापन भी चल रहे हैं। पर विज्ञापन से ठग नहीं पकड़ा जाता। ठग को पकड़ने के लिए स्टाफ, टेक्नोलॉजी और सबसे ज्यादा प्राथमिकता चाहिए। वहीं पर पूरी व्यवस्था सबसे कमजोर दिख रही है। राज्य में साइबर मुख्यालय की तस्वीर हैरान करने वाली है। कुल स्वीकृत पद दो सौ तिरानवे और भरे हुए केवल दो सौ पचपन। इसमें भी साइबर थानों के लिए स्पेशल विंग की हालत खराब है।

हर महीने करीब छत्तीस हजार शिकायतें और उन्हें सुनने के लिए महज चौसठ फीसदी कॉल उठा पाने वाला सिस्टम। मतलब हर तीन में से एक पीड़ित सिर्फ इसलिए ठगा रह जाता है, क्योंकि उसकी कॉल ही नहीं लग पाती। जब पीड़ित की कॉल नहीं लगेगी तो शिकायत दर्ज नहीं होगी। शिकायत दर्ज नहीं होगी तो एफआईआर नहीं होगी और जब एफआईआर नहीं होगी तो ठग को लगेगा कि यह सबसे सुरक्षित अपराध है। इसी सोच ने ठगों का हौसला बढ़ाया है। प्रदेश में साइबर अपराध की रफ्तार को देखते हुए कम से कम तैंतीस सौ पदों की जरूरत है। हर जिले में एक फुल फ्लेज्ड साइबर थाना, डिजिटल फोरेंसिक लैब, ट्रेसिंग के लिए हाईटेक सॉफ्टवेयर और प्रशिक्षित हाथ चाहिए। पर स्टेट साइबर पुलिस मुख्यालय और उसकी क्षेत्रीय इकाइयों में स्टाफ की तंगी बड़ी दीवार बन गई है। हाईटेक अपराध का ग्राफ रोज ऊपर जा रहा है, पर भर्ती का ग्राफ वहीं का वहीं है। नई तकनीक पुराने हाथों में फंस गई है।

सबसे बड़ा सवाल यही है कि जब हजारों करोड़ की ठगी हो रही है तो इसे सबसे बड़ी प्राथमिकता क्यों नहीं माना जा रहा? जब आम आदमी की छोटी-छोटी रकम लुटती है तो उसे साइबर जागरूकता का भाषण दे दिया जाता है। भाषण से जागरूकता आ सकती है, पर सुरक्षा नहीं आती। सुरक्षा तब आएगी जब समय पर कॉल उठे, लिंक ब्लॉक हो और खाता फ्रीज हो। आज के दौर में अपराधी बैंक नहीं लूटता, वह आपका फोन लूटता है और फोन लुटने का मतलब है आपकी पहचान लुटना। ऐसे में साइबर थाने को थाने जैसा नहीं, बल्कि अस्पताल के इमरजेंसी वार्ड जैसा होना चाहिए, जहां चौबीस घंटे रोशनी जले और हर कॉल पर तुरंत रिस्पॉन्स हो। तैंतीस सौ पदों का प्रस्ताव तुरंत मंजूर होना चाहिए और भर्ती तुरंत होनी चाहिए। कॉन्ट्रैक्ट पर नहीं, बल्कि स्थायी और प्रशिक्षित भर्ती। हर जिले में साइबर थाने को मजबूत करना होगा। साइबर अपराध अब बड़े शहरों का विषय नहीं रहा, वह छोटे कस्बों और गांवों तक पहुंच गया है। पुलिस के साथ-साथ बैंकों और टेलीकॉम कंपनियों की जवाबदेही भी तय करना जरूरी है। ठगी का पैसा किसी खाते में जाता है। वह खाता कैसे खुला, उसका केवाईसी किसने किया, यह जांच का हिस्सा होना चाहिए।

आजकल

जब हार्ड डिस्क थक जाएगी तो डीएनए याद रखेगा

चार सौ दो अरब जीबी रोज और एक ग्राम में इक्कीस करोड़ जीबी हर दिन दुनिया में चार सौ दो अरब जीबी डेटा पैदा हो रहा है। हर फोटो, वीडियो, भुगतान और सीसीटीवी फुटेज डेटा है। डेटा विस्फोट के साथ स्टोरेज संकट भी बढ़ रहा है। बढ़ते डेटा बोझ को अब डीएनए में कैद करने की दिशा में काम हो रहा है, क्योंकि पारंपरिक हार्ड डिस्क अपनी सीमा पर पहुंच रही हैं। आज एक सामान्य हार्ड डिस्क 22 टेराबाइट तक स्टोर कर सकती है। इतने डेटा के लिए विशाल ढांचे की जरूरत होगी। इसलिए वैज्ञानिक हार्ड डिस्क का विकल्प जीव विज्ञान में खोज रहे हैं। डीएनए में 21.5 करोड़ जीबी डेटा प्रति ग्राम तक स्टोर करने की क्षमता प्रदर्शित की जा चुकी है। इसमें चार कोड होते हैं - ए, टी, सी और जी। जैसे कंप्यूटर में शून्य और एक होते हैं। वैज्ञानिकों ने इसी कोड को स्टोरेज की भाषा बना दिया है। 2017 में डीएनए फाउंटेन प्रयोग में 215 पेटाबाइट यानी 21.5 करोड़ जीबी डेटा प्रति ग्राम स्टोर करने में सफलता मिली थी। डीएनए की ताकत उसका घनत्व और टिकाऊपन है। हार्ड डिस्क कुछ वर्षों में खराब हो सकती है, जबकि सही परिस्थितियों में डीएनए सैकड़ों वर्षों तक सुरक्षित रहता है। डीएनए में डेटा लिखना महंगा है, पढ़ने की गति धीमी है और दोबारा लिखना कठिन है। इसलिए यह राष्ट्रीय अभिलेख, ऐतिहासिक दस्तावेज और वैज्ञानिक डेटा जैसे दीर्घकालीन भंडारण के लिए अधिक उपयुक्त है। भविष्य में तेज डेटा के लिए एसएसडी और हार्ड डिस्क रहेंगी, जबकि लंबे समय तक सुरक्षित रखने वाला डेटा डीएनए में जा सकता है। जिस दिन यह तकनीक सस्ती हुई, उस दिन स्टोरेज की दुनिया बदल जाएगी।

अमेरिकी डॉलर के इकलौते सिंहासन को चुनौती

ब्रिक्स की नई धुरी पर दुनिया के तीन कोण एक साथ

एक फ्रेम में तीन चेहरे हैं - भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, रूस के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन और चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग। तीन देशों की भौगोलिक दूरी हजारों किलोमीटर की है। तीनों की राजनीतिक व्यवस्थाएं अलग-अलग हैं। तीनों के हित कई बार टकराते भी हैं, पर एक मंच पर जब ये तीनों हाथ मिलाते हैं तो दुनिया की सबसे बड़ी आर्थिक सत्ता यानी डॉलर की नींव में हल्की-सी कंपन महसूस होती है।

नई दिल्ली में हुए ब्रिक्स शिखर सम्मेलन की यही तस्वीर आज पूरी दुनिया में चर्चा का विषय बनी हुई है। इसे केवल एक फोटो नहीं, बल्कि एक नई विश्व व्यवस्था का ट्रेलर कहा जा रहा है। ब्रिक्स अब सिर्फ पांच देशों का क्लब नहीं है। ब्रिक्स की शुरुआत ब्राजील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका से हुई थी। तब इसे पश्चिमी देशों ने एक आर्थिक सेमिनार जैसा ही माना था, पर अब स्थिति बदल चुकी है। ईरान, इथियोपिया, मिस्र और संयुक्त अरब अमीरात जैसे देश भी इस परिवार में आ चुके हैं और सऊदी अरब जैसे बड़े तेल उत्पादक देश दरवाजे पर खड़े हैं। आज ब्रिक्स दुनिया की लगभग 45 प्रतिशत आबादी का प्रतिनिधित्व करता है। दुनिया के सकल घरेलू उत्पाद में इसकी हिस्सेदारी जी-7 से ज्यादा हो चुकी है। सबसे बड़ी बात यह कि यह संगठन अब सिर्फ बात नहीं करता, बल्कि विकल्प बनाने लगा है।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद से अमेरिकी डॉलर दुनिया की आरक्षित मुद्रा बना हुआ है। तेल का व्यापार डॉलर में होता है, हथियारों का व्यापार डॉलर में होता है और संकट के समय अमेरिका डॉलर के जरिए ही प्रतिबंध लगाता है। रूस पर लगे प्रतिबंधों ने पूरी दुनिया को सिखा दिया कि यदि आपका सारा व्यापार डॉलर पर टिका है तो एक सुबह आपका बैंक खाता एक बटन से फ्रीज हो सकता है। इसी डर ने ब्रिक्स देशों को नई सोच पर मजबूर किया है। वह सोच है कि क्या हम अपने बीच का व्यापार अपनी मुद्राओं में कर सकते हैं? क्या हमें हर बार डॉलर के दरवाजे पर जाना जरूरी है? इसी प्रश्न से ब्रिक्स पे, न्यू डेवलपमेंट बैंक और स्थानीय मुद्राओं में व्यापार जैसे विचारों ने जन्म लिया है।

इस सम्मेलन में सबसे ज्यादा ध्यान भारत, रूस और चीन के त्रिकोण पर है। यह त्रिकोण दुनिया की ताकत का सबसे पुराना और सबसे नया समीकरण है। रूस के पास ऊर्जा, तेल, गैस और सैन्य तकनीक है। चीन के पास मैन्युफैक्चरिंग है, दुनिया का सबसे बड़ा कारखाना वही है। भारत के पास बाजार, युवा आबादी और डिजिटल तकनीक का सबसे बड़ा प्रयोगशाला मॉडल है। यदि ये तीनों मिलकर एक वैकल्पिक व्यापार प्रणाली बनाते हैं तो यह केवल अमेरिका के लिए नहीं, बल्कि पूरे पश्चिमी वित्तीय ढांचे के लिए चुनौती होगी।

प्रधानमंत्री मोदी ने भारत की कूटनीतिक, रणनीतिक और प्रबंधकीय कुशलता का जलवा दिखाया। सम्मेलन के उद्घाटन में उन्होंने स्पष्ट कहा कि ब्रिक्स और ग्लोबल साउथ के देशों में परस्पर सहयोग और अंतरराष्ट्रीय मसलों में निर्णायक भूमिका पर जोर देकर संगठन के आगे के रोडमैप की राह दिखाई। साथ ही दिल्ली घोषणा पत्र को सर्वसम्मति से पारित करवाने में सफलता हासिल की। घोषणा पत्र में एक तरह से भारत के सभी एजेंडे पूरे होते दिखे। वहीं दूसरी ओर शी जिनपिंग से मुलाकात में मोदी की दो टूक बात भी चर्चा में रही - सीमा पर शांति जरूरी, मतभेद विवाद न बनें। यह संदेश साफ था कि सहयोग अपनी जगह है, पर संप्रभुता अपनी जगह। यही भारत की नई विदेश नीति की पहचान है।

डॉलर आज भी दुनिया की सबसे मजबूत और भरोसेमंद मुद्रा है। उसकी जगह लेना इतना आसान नहीं है। ब्रिक्स के पास अभी तक डॉलर जैसी कोई एक मुद्रा नहीं है और न ही निकट भविष्य में ऐसी कोई मुद्रा आने की संभावना है। चीन युआन को आगे बढ़ाना चाहता है, रूस रूबल में व्यापार चाहता है और भारत रुपये में। इसलिए ब्रिक्स का लक्ष्य डॉलर को खत्म करना नहीं, बल्कि डॉलर के विकल्प को जिंदा करना है, ताकि कोई एक देश मुद्रा का उपयोग हथियार के रूप में न कर सके।

यदि भारत ईरान से तेल रुपये में खरीदता है और रूस भारत को उर्वरक रूबल और रुपये के मिश्रण में बेचता है तो डॉलर की जरूरत अपने आप कम हो जाएगी। यह धीमी प्रक्रिया है, पर इसकी शुरुआत हो चुकी है। अमेरिका और यूरोप ने पिछले तीन दशकों तक दुनिया को एकध्रुवीय बनाए रखा। ब्रिक्स ने इसी व्यवस्था को चुनौती दी है। न्यू डेवलपमेंट बैंक इसका बड़ा उदाहरण है। यह बैंक विकासशील देशों को कर्ज देने का विकल्प उपलब्ध कराता है। यही छोटा-सा बदलाव बड़ी ताकत का संकेत है।

इस पूरी नई व्यवस्था में भारत की भूमिका सबसे दिलचस्प है। भारत अमेरिका का भी साझेदार है और रूस का भी पुराना मित्र है। भारत चीन का पड़ोसी भी है और प्रतिस्पर्धी भी। ऐसे में भारत ही वह देश है जो इस नई धुरी को टकराव से बचाकर सहयोग की दिशा में ले जा सकता है। ब्रिक्स का भविष्य केवल चीन या रूस नहीं, बल्कि भारत भी तय करेगा।

दुनिया की ताकत के तीन कोण एक साथ खड़े होकर एक ही बात कह रहे हैं कि दुनिया अब एक दुकान से नहीं चलेगी। दुनिया को अब कई काउंटर चाहिए। डॉलर आज भी राजा है, पर अब उसके दरबार में सवाल पूछने वाले भी आ गए हैं। ब्रिक्स शिखर सम्मेलन ने डॉलर को नहीं हराया है, पर उसने यह बता दिया है कि अब विकल्प मौजूद है। और जब बाजार में विकल्प आता है तो एकाधिकार अपने आप कमजोर होने लगता है। यही नई ताकत के उदय की सबसे बड़ी पहचान है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

जब मशीन इंसान से तेज सोचने लगे तो सभ्यता का क्या होगा?

एआई की अंधी दौड़

पिछले दो वर्षों में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ने जितनी छलांग लगाई है, उतनी छलांग पिछले बीस वर्षों में भी नहीं लगी थी। कभी यह तकनीक सिर्फ प्रयोगशाला की चीज लगती थी। आज यह हमारे फोन में है, हमारे दफ्तर में है, हमारे स्कूल में है और हमारे युद्ध के मैदान तक में है।

हर कंपनी, हर सरकार, हर स्टार्टअप एआई को सबसे तेज बनाने में लगा है। किसी को पहले पहुंचना है, किसी को बड़ा मॉडल बनाना है, किसी को ज्यादा निवेश लेना है। इस होड़ में एक सवाल कहीं पीछे छूट गया है कि क्या यह रफ्तार संभाली भी जा सकेगी। हाल ही में दुनिया की बड़ी एआई कंपनियों के प्रमुखों ने खुद कहा है कि अब गति को धीमा करने की जरूरत है। जब बनाने वाले ही कहने लगें कि रुकना जरूरी है तो समझना चाहिए कि खतरा दरवाजे पर नहीं, बल्कि घर के अंदर आ चुका है। यह चेतावनी किसी फिल्म की कहानी नहीं, बल्कि एक गंभीर वैज्ञानिक चेतावनी है।

जब हर क्षेत्र में एआई घुसेगा तो इंसान कहां जाएगा? पहले कहा जाता था कि एआई से नौकरियां जाएंगी, एआई से सोचने की जरूरत ही खत्म हो जाएगी। आज एआई कविता लिख रहा है, पेंटिंग बना रहा है, दवा खोज रहा है, कोर्ट में बहस के लिए ड्राफ्ट तैयार कर रहा है और युद्ध में टारगेट तय कर रहा है। यदि इसी गति से एआई को जीवन के हर कोने में ठूंसा गया तो इंसान धीरे-धीरे एक दर्शक बन जाएगा। वह एक ऐसी दुनिया में रहेगा, जहां फैसले मशीन लेगी और इंसान सिर्फ उन फैसलों को मानेगा।

किसान को कौन-सा बीज बोना है, यह एआई बताएगा। छात्र को क्या पढ़ना है, यह एआई तय करेगा। डॉक्टर को कौन-सी दवा देनी है, यह भी एआई सुझाएगा और सैनिक को गोली कब चलानी है, यह भी एआई तय कर सकता है। यह सुविधा नहीं है, यह पराधीनता की नई शक्ल है। जब सारे नवाचार एक ही तकनीक पर टिक जाएंगे तो उस तकनीक में आई एक छोटी-सी खराबी पूरी सभ्यता को हिला देगी। एआई से डेटा लीक होगा, प्राइवेसी खत्म होगी, यह सच है, पर यह छोटा सच है। बड़ा सच यह है कि एआई अब खुद सीख रहा है, खुद को बेहतर बना रहा है और कई बार उसके बनाने वालों को भी नहीं पता कि वह कैसे सोच रहा है। जब कोई प्रणाली इतनी जटिल हो जाए कि उसका निर्माता भी उसके फैसले को समझ न सके तो उसे नियंत्रित कैसे किया जाएगा?

एआई मॉडल अब ब्लैक बॉक्स बनते जा रहे हैं। इनपुट डालो, आउटपुट लो, पर बीच में क्या हुआ, कोई नहीं जानता। ऐसी स्थिति में यदि एआई कोई गलत निर्णय लेता है तो जिम्मेदार कौन होगा, मशीन या इंसान? इसीलिए अब दुनिया भर में मांग उठ रही है कि एआई के विकास को नियंत्रित किया जाए, उसे धीमा किया जाए और उसकी जांच के लिए स्वतंत्र संस्थाएं बनाई जाएं, ठीक वैसे ही जैसे परमाणु ऊर्जा के लिए अंतरराष्ट्रीय एजेंसी बनी है।

तेजी का खतरा बेरोजगारी नहीं, बल्कि बेकार होता इंसानी दिमाग भी है। जब सब कुछ एआई करेगा तो इंसान सोचना बंद कर देगा। याद रखिए कि दिमाग भी मांसपेशी की तरह है। जितना इस्तेमाल होगा, उतना तेज होगा और जितना कम इस्तेमाल होगा, उतना कमजोर होगा। एआई बनाने के लिए भारी पैसा और भारी डेटा चाहिए। ये दोनों आज गिनी-चुनी कंपनियों के पास हैं। यदि एआई ही सब कुछ तय करेगा तो दुनिया की सत्ता भी इन्हीं कुछ कंपनियों के हाथ में चली जाएगी। यह लोकतंत्र के लिए बड़ा खतरा है। हथियारों के क्षेत्र में आज ड्रोन खुद टारगेट चुन सकते हैं। कल को एआई आधारित हथियार बिना इंसानी इजाजत के युद्ध शुरू कर सकते हैं। ऐसी गलती का कोई अनडू बटन नहीं होगा। एआई को नियंत्रित करने का मतलब उसे रोक देना नहीं है। नियंत्रण का मतलब है उसे जिम्मेदार बनाना। जैसे गाड़ी तेज चल सकती है, पर उसके लिए ब्रेक, लाइसेंस और ट्रैफिक नियम जरूरी हैं, वैसे ही एआई के लिए भी नियम जरूरी हैं। हर बड़ी कंपनी को बताना होगा कि उसका मॉडल किस डेटा पर ट्रेन हुआ है, उसमें क्या पक्षपात है और वह कैसे फैसले लेता है। यदि एआई से किसी को नुकसान होता है तो कंपनी जिम्मेदार होगी, सिर्फ यूजर नहीं। जीवन और मृत्यु से जुड़े फैसले जैसे चिकित्सा, न्याय और युद्ध में अंतिम निर्णय इंसान का ही होना चाहिए। मशीन सिर्फ सलाह दे सकती है, आदेश नहीं। एआई किसी एक देश की तकनीक नहीं है, इसलिए इसके नियम भी वैश्विक होने चाहिए। जैसे जलवायु परिवर्तन पर सभी देश साथ आते हैं, वैसे ही एआई पर भी आना होगा। भारत के लिए यह मौका भी है और चेतावनी भी। हमारे पास डेटा है, प्रतिभा है और बड़ा बाजार है।

हम एआई में पीछे नहीं रह सकते, पर हमें अंधी दौड़ में भी शामिल नहीं होना चाहिए। हमें ऐसा एआई चाहिए जो भारतीय भाषाओं को समझे, किसान की मदद करे, जो स्कूल में शिक्षक की जगह न ले, बल्कि शिक्षक को और बेहतर बनाए। हमें एआई को देवता नहीं बनाना है, न ही उसे राक्षस समझना है। उसे एक औजार की तरह देखना है। औजार का काम हाथ को मजबूत करना है, हाथ को काटना नहीं।

इतिहास गवाह है, हर बड़ी तकनीक ने पहले चकाचौंध दी, फिर चुनौती दी। पहिए ने रफ्तार दी तो दुर्घटना भी दी। बिजली ने रोशनी दी तो करंट का डर भी दिया। पर इंसान ने हर बार नियम बनाकर तकनीक को साधा। एआई के साथ भी यही करना होगा। अभी भी समय है। अभी भी हम तय कर सकते हैं कि एआई इंसान के लिए काम करेगा या इंसान एआई के लिए। यदि आज हमने गति को नियंत्रित नहीं किया तो कल गति हमें नियंत्रित कर लेगी। तेज चलना विकास है, पर बिना ब्रेक के तेज चलना आत्महत्या है। एआई को धीमा करना उसकी हार नहीं, बल्कि इंसानी सभ्यता की जीत होगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

दहशत का स्टेशन | प्लेटफार्म पर अनचाहे मुसाफिर...

जब चूहों के सामने रेलवे का विशाल तंत्र बौना पड़ जाए

स्टेशन कभी सफर की शुरुआत का एहसास कराता था, अब वही जगह दहशत का स्टेशन बनती जा रही है। भोपाल समेत कई बड़े स्टेशनों पर यात्री अब ट्रेन का इंतजार नहीं, बल्कि चूहों से अपनी सुरक्षा का इंतजार कर रहे हैं। कभी यात्री की नाक कुतरने की खबर आती है, कभी सोते हुए बच्चे का पैर काटने की। कभी बैग कुतरकर कपड़े खराब करने की तो कभी खाने के पैकेट फाड़ने की। सोचिए, एक यात्री जो आरक्षण कराकर चादर ओढ़कर सोया है, उसके बगल से चूहा गुजर रहा है और रेलवे प्रशासन खड़ा देख रहा है। यह असुविधा का मामला नहीं रहा, यह अब गंभीर सवाल बनता जा रहा है। यह सवाल यात्रियों की सेहत से जुड़ा है, उनकी सुरक्षा से जुड़ा है और सबसे बढ़कर उस भरोसे से जुड़ा है, जो यात्री भारतीय रेल पर करता है।

रेलवे का दावा है कि वह विश्वस्तरीय सुविधाएं दे रही है, पर प्लेटफार्म पर घूमते चूहे उस दावे की सारी पोल खोल रहे हैं। चूहों का आतंक केवल खुले हिस्सों तक सीमित नहीं है, बल्कि उन अंदरूनी स्थानों तक पहुंच गया है, जहां खाद्य सामग्री रखी जाती है। जहां खाद्य सामग्री खुली रहती है, वहां चूहे पहुंच रहे हैं और जहां खाद्य सामग्री ढकी है, वहां भी गंध से पहुंच रहे हैं। यदि यह स्थिति सही है तो रेलवे की खाद्य सुरक्षा व्यवस्था और निगरानी, दोनों पर सवाल उठना स्वाभाविक है।

भोजन दूषित होने और संक्रमण फैलने का खतरा बढ़ा हुआ है। कुछ दिन पहले मंगला एक्सप्रेस में खाने के बाद तीस बच्चों की तबीयत बिगड़ने की घटना सामने आई थी। बच्चों को उल्टी, दस्त और बुखार की शिकायत हुई थी, जबकि पांच बच्चों की हालत गंभीर बताई गई थी। वहीं, कुछ महीने पहले एग्जीक्यूटिव लाउंज में परोसे गए दाल-चावल में कीड़े मिलने की शिकायत भी सामने आई थी। ये घटनाएं अलग-अलग लगती हैं, पर इनका जोड़ एक ही जगह पर होता है और वह है लापरवाही। रेलवे के रेस्टोरेंट और खान-पान से जुड़े ठेकों की निगरानी कौन कर रहा है, यह बड़ा सवाल है।

पेस्ट एंड रोडेंट कंट्रोल का कागजी खेल भी सवालों के घेरे में है। भोपाल रेलवे स्टेशन के यार्ड में चूहों का आतंक खाने की जगहों तक पहुंचा है। पहले भी तबीयत बिगड़ने के मामले आ चुके हैं। चूहों की मौजूदगी को नजरअंदाज करना सेहत के साथ खिलवाड़ है। हर बड़े स्टेशन पर पेस्ट और रोडेंट कंट्रोल की अनुबंध व्यवस्था पर सवाल उठना स्वाभाविक है। यह सवाल इसलिए भी बड़ा है, क्योंकि यह ठेका यात्रियों की सुरक्षा से सीधा जुड़ा है। अनुबंध की शर्तों में साफ लिखा है कि पेस्ट कंट्रोल के लिए संबंधित एजेंसी अनुबंध की शर्तों के मुताबिक काम नहीं कर रही है तो रेलवे की जिम्मेदारी तय होती है। मामलों में अनुबंध के प्रावधानों के तहत जुर्माना लगाने से लेकर अनुबंध समाप्त करने तक का प्रावधान हो सकता है। फिर लगातार चूहों का मेला लगने और इसके बावजूद व्यवस्था में सुधार न होने पर कार्रवाई क्यों नहीं हुई? यह सवाल इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि रेलवे के अधिकारी नियमित निरीक्षण का दावा कर रहे हैं। यदि कर रहे हैं तो चूहे दिख क्यों रहे हैं और यदि नहीं कर रहे हैं तो दावा क्यों किया जा रहा है?

सबसे दुखद बात यह है कि इस पूरे मामले में यात्री खुद को अकेला महसूस कर रहा है। उसकी शिकायत का कोई ठोस जवाब नहीं है। वह ट्वीट करता है, फोटो डालता है, पर अगले दिन फिर वही चूहा उसी बेंच के नीचे घूमता दिखता है। रेलवे प्रशासन असहाय नजर आ रहा है। कभी कहा जाता है कि ठेकेदार जिम्मेदार है, कभी कहा जाता है कि सफाई एजेंसी जिम्मेदार है। यात्री सोचता है कि टिकट उसने रेलवे से लिया है, ठेकेदार से नहीं, तो जवाबदेही रेलवे की होनी चाहिए।

वीआईपी लाउंज में भी चूहे घूमते नजर आ रहे हैं। ऐसे में खाद्य सामग्री के दूषित होने और संक्रमण फैलने का खतरा बढ़ जाता है। यात्रियों का आरोप है कि एसी कोच में भी चूहे घुस रहे हैं और रात में चादर-कंबल कुतर रहे हैं। ऐसे में यात्री की नींद ही नहीं, उसकी सेहत भी खतरे में है। रेलवे को समझना होगा कि यात्री सिर्फ गंतव्य तक नहीं पहुंचना चाहता, बल्कि सुरक्षित पहुंचना चाहता है। इस समस्या का हल केवल दवा छिड़कने से नहीं होगा। इसका हल व्यवस्था की सोच बदलने से होगा। पेस्ट कंट्रोल को कागज से निकालकर जमीन पर लागू किया जाए। हर स्टेशन पर हर हफ्ते ऑडिट हो और उसकी रिपोर्ट सार्वजनिक हो। खाद्य सामग्री के भंडारण को पूरी तरह से सील और सुरक्षित बनाया जाए। खुला खाना रखना बंद हो और कचरा प्रबंधन को सख्त किया जाए, क्योंकि चूहे वहीं आते हैं, जहां कचरा और खाना खुले में मिलता है। ठेकों में जवाबदेही तय हो। यदि चूहे मिलते हैं तो सिर्फ जुर्माना नहीं, बल्कि ठेका निरस्त करने की कार्रवाई हो।

सबसे जरूरी काम यह कि यात्री की शिकायत को गंभीरता से लिया जाए। एक ऐसा सिस्टम बने, जहां यात्री द्वारा भेजी गई फोटो या वीडियो पर चौबीस घंटे के अंदर कार्रवाई हो। रेलवे भारत की जीवन रेखा है और जीवन रेखा पर चूहों का इस तरह घूमना उस जीवन को ही खतरे में डालना है। यह समय है जब रेलवे को यह मानना होगा कि छोटा-सा चूहा भी बड़े सिस्टम की विश्वसनीयता को कुतर सकता है। यदि समय रहते नहीं चेते तो कल यही चूहे यात्रियों के भरोसे को भी कुतर जाएंगे।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)